मोहम्मद यूसुफ और अन्य

बनाम

राजकुमार एवं अन्य

(सिविल अपील क्रमांक 800 ऑफ़ 2020)

05 फरवरी 2020

[अशोक भूषण और एम आर शाह, जे जे]

पंजीकरण अधिनियम, 1908 - धारा 17 - समझौता डिक्री - यदि पंजीकरण की आवश्यकता है - अपीलकर्ता के पिता द्वारा 1984 में दायर मुकदमा, अन्य बातों के अलावा, सर्वेक्षण संख्या 203 के 7 बिस्वा क्षेत्र के संबंध में घोषणा के लिए, जो पूर्व में उनकी भूमि के सर्वेक्षण संख्या 223 के साथ जुड़ा हुआ था - मुकदमे की जमीन पर उनका कब्जा था, जो प्रतिवादी के नाम पर दर्ज थी - 7 बिस्वा क्षेत्र पर उनका अधिकार घोषित करते हुए दिनांक 04-10-85 की समझौता डिक्री पारित की गई और यह घोषित किया गया कि शेष भूमि प्रतिवादी की है - मुकदमा 1998 में दायर किया गया प्रतिवादी संख्या 1 और 2 द्वारा सर्वेक्षण संख्या 203 वाले दो क्षेत्रों के संबंध में अपीलकर्ताओं के खिलाफ स्थायी निषेधाज्ञा के लिए - प्रतिवादी संख्या 1 और 2 ने उक्त क्षेत्रों को प्रतिवादी संख्या 4-7 को बेच दिया और उन्हें वादी के रूप में शामिल किया गया - साक्ष्य के दौरान, इनमें से एक अपीलकर्ता ने दिनांक 04-10-85 की डिक्री को प्रदर्शित करने का प्रयास किया - डिक्री की स्वीकार्यता पर वादी की आपत्ति यह थी कि डिक्री पंजीकृत नहीं होने के कारण साक्ष्य में स्वीकार नहीं की जा सकती - सिविल जज ने माना कि डिक्री को पंजीकृत करना आवश्यक था, इसलिए यह स्वीकार्य नहीं थी - उच्च कोर्ट ने अपीलकर्ता की रिट याचिका को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि डिक्री को पंजीकृत करना आवश्यक था - माना गया: धारा 17 की उप-धारा (2) (vi) के आधार पर, न्यायालय के <u>किसी भी डिक्री या आदेश को पंजीकरण की आवश्यकता नहीं</u> है - उप-खंड (vi) में उप-धारा (2) में, एक श्रेणी को उप-खंड (vi) से बाहर रखा गया है, अर्थात, एक डिक्री या आदेश जो एक समझौते पर किया गया हो और जिसमें

मुकदमे या कार्यवाही की विषय-वस्तु के अलावा अन्य अचल संपत्ति शामिल हो - धारा 17(1)(बी) और धारा 17(2)(vi) को संयुक्त रूप से पढ़ने से, यह स्पष्ट है कि एक समझौता डिक्री जिसमें अचल संपत्ति शामिल है, जो कि मुकदमे या कार्यवाही का विषय है, पंजीकरण की आवश्यकता है, हालांकि न्यायालय की किसी भी डिक्री या आदेश को धारा 17(2)(vi) के आधार पर पंजीकरण से छूट दी गई है - डिक्री दिनांक 04-10-85 संपत्ति के संबंध में थी, जो मुकदमे का विषय था, इसलिए धारा 17(2)(vi) का बहिष्करण खंड के अंतर्गत नहीं आता था और वर्तमान मामला धारा 17(2)(vi) के तहत मुख्य अपवाद के अंतर्गत आता है, यानी, "न्यायालय का कोई डिक्री या आदेश" - समझौता डिक्री दिनांक 04-10-85 को पंजीकरण की आवश्यकता नहीं थी - सिविल जज के आदेश और उच्च न्यायालय के फैसले को रद्द कर दिया गया है - समझौता डिक्री दिनांक 04-10-85 को ट्रायल कोर्ट द्वारा प्रदर्शित किया जाएगा - भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1899 - धारा 2 (14) /

कोर्ट ने अपील स्वीकार करते हुए

माना गया: 1.1 धारा 17(1)(बी) के तहत, गैर-वसीयतनामा उपकरण जो वर्तमान या भविष्य में, किसी भी अधिकार, शीर्षक या हित को बनाने, घोषित करने, आवंटित करने, सीमित करने या समाप्त करने का तात्पर्य या संचालन करते हैं, चाहे निहित या आकस्मिक हों , एक सौ रुपये या उससे अधिक मूल्य की अचल संपत्ति के लिए पंजीकरण की आवश्यकता होती है। शब्द "इंस्ट्रूमेंट" को पंजीकरण अधिनियम में परिभाषित नहीं किया गया है, लेकिन भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1899 की धारा 2(14) द्वारा परिभाषित किया गया है। न्यायालय द्वारा पारित एक समझौता डिक्री आम तौर पर धारा 17(1)(बी) के अंतर्गत आती है, लेकिन धारा 17 की उप-धारा (2) एक डिक्री या आदेश को छोड़कर न्यायालय के किसी भी डिक्री या आदेश जो एक समझौते पर किया गया को अपवाद प्रदान करती है। इसमें मुकदमे या कार्यवाही की विषय-वस्तु के अलावा अन्य अचल संपत्ति शामिल है। इस प्रकार, धारा 17 की उपधारा (2)(vi) के आधार पर न्यायालय की किसी भी <u>डिक्री या आदेश को पंजीकरण की आवश्यकता</u> नहीं है।

उप-धारा (2) के उप-खंड (vi) में, एक श्रेणी को उप-खंड (vi) से बाहर रखा गया है, अर्थात, एक डिक्री या आदेश जो एक समझौते पर किया गया है और जिसमें मुकदमे या कार्यवाही की विषय-वस्तु अचल संपत्ति के अलावा अन्य अचल संपत्ति शामिल है। । इस प्रकार, धारा 17(1)(बी) और धारा 17(2)(vi) को संयुक्त रूप से पढ़ने से, यह स्पष्ट है कि एक समझौता डिक्री जिसमें अचल संपत्ति शामिल है, जो कि मुकदमे या कार्यवाही का विषय है, पंजीकरण की आवश्यकता है, हालांकि कोई भी न्यायालय की डिक्री या आदेश को धारा 17(2)(vi) के आधार पर पंजीकरण से छूट दी गई है। 1984 के सूट नंबर 250-ए में पारित डिक्री की एक प्रति अनुबंध पी-2 के रूप में रिकॉर्ड पर लाई गई थी, जो इंगित करती है कि दिनांक 04-10-1985 की डिक्री संपत्ति के लिए न्यायालय द्वारा पारित की गई थी, जो मुकदमे का विषय था। इस प्रकार, धारा 17(2)(vi) में बहिष्करणीय खंड लागू नहीं है और समझौता डिक्री दिनांक 04-10-1985 को धारा 17(2)(vi) के सादे पढ़ने पर पंजीकृत होने की आवश्यकता नहीं थी। [पैरा 5,6]

1.2 वर्तमान मामले के तथ्यों में, दिनांक 04-10-1985 का डिक्री संपत्ति के संबंध में था, जो मुकदमे का विषय था, इसलिए धारा 17(2)(vi) के बहिष्करण खंड द्वारा कवर नहीं किया गया और वर्तमान मामला कवर किया गया है धारा 17(2)(vi) में तैयार किए गए मुख्य अपवाद द्वारा, यानी, "न्यायालय का कोई डिक्री या आदेश"। जब धारा 17(1)(बी) द्वारा अपेक्षित किसी उपकरण के पंजीकरण को विशेष रूप से धारा 17(2)(vi) द्वारा बाहर रखा जाता है, यह प्रदान करते हुए कि उप-धारा (1) के खंड (बी) और (सी) में कुछ भी लागू नहीं होता है न्यायालय के किसी भी डिक्री या आदेश के अनुसार, समझौता डिक्री दिनांक 04-10-1985 को पंजीकरण की आवश्यकता नहीं थी और विद्वान सिविल न्यायाधीश के साथ-साथ उच्च न्यायालय ने अन्यथा मानने में गलती की। सिविल जज के आदेश के साथ-साथ हाई कोर्ट के फैसले को भी रद्द किया जाता है। समझौता डिक्री दिनांक 04-10-1985 को ट्रायल कोर्ट द्वारा प्रदर्शित किया जाए। [पैरा 14]

सोम देव और अन्य बनाम रति राम और अन्य **(2006) 10 एससीसी 788: [2006] 5 सप्ल एससीआर 778 - पर निर्भर।**

भूप सिंह बनाम राम सिंह मेजर और अन्य **(1995) 5 एससीसी 709: [1995] 3 सप्ल एससीआर 466 - अनुपयुक्त ठहराया गया।**

गुरुद्वारा साहिब बनाम ग्राम पंचायत ग्राम सिरथला और अन्य **(2014) 1 एससीसी 669;** *रविंदर कौर ग्रेवाल और अन्य बनाम मंजीत कौर और अन्य* **(2019) 8 एससीसी 729 - संदर्भित।**

केस कानून संदर्भ

(2014) 1 एससीसी 669	**पैरा 2.3**	**को संदर्भित करता है**
[1995] 3 सप्ल एससीआर 466	**पैरा 6**	**को अनुपयुक्त माना गया**
(2019) 8 एससीसी 729	**पैरा 9**	**को संदर्भित करता है**
[2006] 5 सप्ल एससीआर 778	**पैरा 13**	**पर निर्भर था**

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2020 की सिविल अपील संख्या 800

2015 की रिट याचिका संख्या 2170 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, इंदौर खंडपीठ के निर्णय और आदेश दिनांक 13-02-2017 से।

अमित वाधवा, अमित के. श्रीवास्तव, रौनक पारेख, संजय के. हदाला, संजय यादव, सुनील के. सिंह, संजीव कुमार, गोपी चंद, डॉ. विनोद कुमार तिवारी, सुश्री तरूणा अर्धेन्दुमौली प्रसाद, अर्धेंदुमौली कुमार प्रसाद, पीयूष सिंह, वैभव श्रीवास्तव, मोहनीश निर्वान, उपस्थित पक्षों के लिए वकील।

न्यायालय का निर्णय सुनाया गया

अशोक भूषण, जे.

1. यह अपील मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की इंदौर खंडपीठ के दिनांक 13-02-2017 के फैसले के खिलाफ दायर की गई है, जिसमें ट्रायल कोर्ट के दिनांक 07-01-2015 के आदेश को

चुनौती देने वाली अपीलकर्ता की रिट याचिका को खारिज कर दिया गया था, जिसके तहत ट्रायल कोर्ट ने यह माना गया है कि अपीलकर्ता द्वारा दायर की जाने वाली समझौता डिक्री पंजीकरण के अभाव में साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य नहीं है।

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं:-

2.1 अपीलकर्ता के पिता हबीब खा द्वारा घोषणा और निषेधाज्ञा के लिए 1984 का एक मुकदमा संख्या 250-ए दायर किया गया था। यह वाद ग्राम किटवानी, कस्बा मंदसौर में स्थित सर्वे क्रमांक 203 के 7 बिस्वा क्षेत्र के लिए दायर किया गया था, जो पूर्व में वादी की भूमि सर्वे क्रमांक 223 के साथ जुड़ा हुआ था। वाद की भूमि पर वादी का कब्जा था, जो प्रतिवादी के नाम दर्ज थी। दिनांक 04-10-1985 के मुकदमे में एक समझौता डिक्री पारित की गई जिसमें 7 बिस्वा क्षेत्र पर वादी का अधिकार घोषित किया गया और यह घोषित किया गया कि शेष भूमि प्रतिवादी की है।

2.2 अपीलकर्ता, जो हबीब खा के बेटे थे, ने उपरोक्त क्षेत्र पर कब्ज़ा होने का दावा किया था, फिर भी उनका कब्ज़ा जारी रहा। सर्वेक्षण संख्या 203 वाले 825 वर्ग फुट और 1650 वर्ग फुट के दो क्षेत्रों के संबंध में स्थायी निषेधाज्ञा के लिए अपीलकर्ताओं के खिलाफ प्रतिवादी संख्या 1 और 2 द्वारा 16.09.1998 को एक मुकदमा संख्या 90-ए, 2006 दायर किया गया था। प्रतिवादी संख्या 1 और 2 ने उपरोक्त दो क्षेत्रों को प्रतिवादी संख्या 4 से 7 को बेच दिया और उन्हें उपरोक्त मुकदमे में वादी के रूप में शामिल किया गया। 1998 के सिविल सूट नंबर 260 ए में अपीलकर्ताओं द्वारा एक लिखित बयान दायर किया गया था जिसमें कहा गया था कि उत्तरदाताओं ने सर्वेक्षण नंबर 203 का हिस्सा होने के नाते 1650 वर्ग फुट के क्षेत्र पर जबरदस्ती कब्जा कर लिया है, जो अपीलकर्ता के वास्तविक, शांतिपूर्ण और निर्बाध कब्जे में था और 1951 से उनके पुश्तैनी। लिखित बयान

के साथ, अपीलकर्ता द्वारा क्षेत्र पर कब्ज़ा वापस पाने के लिए एक प्रतिदावा दायर किया गया था।

2.3 अपीलकर्ताओं में से एक, मोहम्मद हाफ़िज़ के साक्ष्य के दौरान, उन्होंने 1984 के सिविल सूट संख्या 250 ए में पारित दिनांक 04-10-1985 के डिक्री को प्रदर्शित करने का प्रयास किया, जिस पर वादी ने आपत्ति जताई थी। डिक्री की स्वीकार्यता पर वादी की आपत्ति यह थी कि डिक्री पंजीकृत न होने के कारण साक्ष्य में स्वीकार नहीं की जा सकती। विद्वान सिविल न्यायाधीश ने पक्षों को सुना और उपरोक्त दस्तावेज़ की स्वीकार्यता के संबंध में दिनांक 07-01-2015 को आदेश पारित किया। सिविल जज ने यह विचार रखा कि दिनांक 04-10-1985 की डिक्री को पंजीकरण अधिनियम की धारा 17(1)(ई) के प्रावधान के अनुसार पंजीकृत किया जाना आवश्यक है, इसलिए यह साक्ष्य में स्वीकार्य नहीं है। दिनांक 07-01-2015 के आदेश को चुनौती देते हुए अपीलकर्ता द्वारा एक रिट याचिका संख्या 2170/2015 दायर की गई थी। उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा रिट याचिका को यह मानते हुए खारिज कर दिया कि डिक्री को पंजीकृत किया जाना आवश्यक था। उच्च न्यायालय ने माना कि यह तथ्य कि मुकदमा प्रतिकूल कब्जे की दलील पर आधारित था, यह दर्शाता है कि 1994 के मुकदमा संख्या 250-ए के वादी के पास मुकदमे की संपत्ति में पहले से मौजूद कोई स्वामित्व नहीं था। **गुरुद्वारा साहिब बनाम ग्राम पंचायत ग्राम सिरथला और अन्य, (2014) 1 एससीसी 669** में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा करते हुए, उच्च न्यायालय ने माना कि यह तय है कि प्रतिकूल कब्जे की दलील के आधार पर घोषणात्मक डिक्री का दावा नहीं किया जा सकता है और प्रतिकूल कब्जा ही किया जा सकता है। प्रतिवादी द्वारा ढाल के रूप में उपयोग किया गया। हाई कोर्ट के फैसले से दुखी होकर यह अपील दायर की गयी है.

3. इस अपील में विचारणीय एकमात्र प्रश्न यह है कि क्या उपर्युक्त समझौता डिक्री दिनांक 04-10-1985 को पंजीकरण अधिनियम, 1908 की धारा 17 के तहत पंजीकृत किया जाना आवश्यक था या नहीं?

4. पंजीकरण अधिनियम के भाग III में एक शीर्षक "पंजीकरण योग्य दस्तावेजों का" शामिल है जिसमें धारा 17 को जगह मिलती है, जिसमें एक शीर्षक "जिन दस्तावेजों का पंजीकरण अनिवार्य है" शामिल है। धारा 17(1) उन दस्तावेजों से संबंधित है जिनका पंजीकरण अनिवार्य है। धारा 17(2) में प्रावधान है कि उप-धारा (1) के खंड (बी) और (सी¢) में से कुछ भी उसमें बताए गए विभिन्न दस्तावेजों पर लागू नहीं होता है। धारा 17(1) और 17(2)(vi), जो वर्तमान मामले के लिए प्रासंगिक हैं, इस प्रकार हैं: -

> "**17. वे दस्तावेज़ जिनका पंजीकरण अनिवार्य है**–(1) निम्नलिखित दस्तावेज़ पंजीकृत किए जाएंगे, यदि वह संपत्ति जिससे वे संबंधित हैं, उस जिले में स्थित है, और यदि उन्हें उस तारीख को या उसके बाद निष्पादित किया गया है, जिस दिन अधिनियम संख्या XVI 1864 का, या भारतीय पंजीकरण अधिनियम, 1866, या भारतीय पंजीकरण अधिनियम, 1871, या भारतीय पंजीकरण अधिनियम, 1877, या यह अधिनियम आया या लागू हुआ, अर्थात्: -
>
> (ए) अचल संपत्ति के उपहार के साधन,
>
> (बी) अन्य गैर-वसीयतनामा उपकरण जो वर्तमान या भविष्य में, एक सौ रुपये के मूल्य का कोई भी अधिकार, शीर्षक या हित, चाहे निहित या आकस्मिक, बनाने, घोषित करने, आवंटित करने, सीमित करने या समाप्त करने के लिए अभिप्रेत या संचालित होते हैं और ऊपर की ओर, अचल संपत्ति तक या उसमें;
>
> (सी) गैर-वसीयतनामा लिखत जो ऐसे किसी भी अधिकार, शीर्षक या हित के निर्माण, घोषणा, असाइनमेंट, सीमा या विलुप्त होने के कारण किसी भी विचार की प्राप्ति या भुगतान को स्वीकार करते हैं; और

(डी) साल-दर-साल, या एक वर्ष से अधिक किसी भी अवधि के लिए अचल संपत्ति के पट्टे, या वार्षिक किराया आरक्षित करना;

(ई) किसी न्यायालय या किसी पुरस्कार के किसी डिक्री या आदेश को स्थानांतरित करने या सौंपने वाले गैर-वसीयतनामा उपकरण, जब ऐसा डिक्री या आदेश या पुरस्कार वर्तमान या भविष्य में, किसी भी अधिकार को बनाने, घोषित करने, आवंटित करने, सीमित करने या समाप्त करने के लिए, स्वामित्व या हित, चाहे निहित हो या आकस्मिक, एक सौ रुपये और उससे अधिक मूल्य का, अचल संपत्ति में या अभिप्रेत या संचालित होता है, उसमें:

बशर्ते कि राज्य सरकार, आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशित आदेश द्वारा, किसी भी जिले या किसी जिले के हिस्से में निष्पादित किसी भी पट्टे को इस उपधारा के संचालन से छूट दे सकती है, जिसकी दी गई शर्तें पांच वर्ष से अधिक नहीं हैं और वार्षिक जिनके द्वारा आरक्षित किराया पचास रुपये से अधिक न हो।

(2) उपधारा (1) के खंड (बी) और (सी) में कुछ भी लागू नहीं होता है-

xxx xxx xxxx

(vi) न्यायालय की कोई भी डिक्री या आदेश, किसी डिक्री या आदेश को छोड़कर, जो किसी समझौते पर किया गया हो और जिसमें मुकदमे या कार्यवाही की विषय-वस्तु के अलावा अन्य अचल संपत्ति शामिल हो; या"

5. धारा 17(1)(बी) के तहत, गैर-वसीयतनामा उपकरण जो वर्तमान या भविष्य में, किसी भी अधिकार, शीर्षक या हित को बनाने, घोषित करने, आवंटित करने, सीमित करने या समाप्त करने का तात्पर्य या संचालन करते हैं, चाहे निहित या आकस्मिक हों, एक सौ रुपये या उससे अधिक मूल्य की अचल संपत्ति के लिए पंजीकरण की आवश्यकता होती है। शब्द "इंस्ट्रूमेंट" को

पंजीकरण अधिनियम में परिभाषित नहीं किया गया है, लेकिन भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1899 की धारा 2(14) द्वारा परिभाषित किया गया है।

6. न्यायालय द्वारा पारित एक समझौता डिक्री आम तौर पर धारा 17(1)(बी) के अंतर्गत आती है, लेकिन धारा 17 की उप-धारा (2) व्यक्त डिक्री या आदेश को एक समझौते पर किया जाना को छोड़कर किसी भी न्यायालय के किसी भी डिक्री या आदेश के लिए अपवाद प्रदान करती है। इसमें मुकदमे या कार्यवाही की विषय-वस्तु के अलावा अन्य अचल संपत्ति शामिल है। इस प्रकार, धारा 17 की उपधारा (2)(vi) के आधार पर न्यायालय की किसी भी <u>डिक्री या आदेश को पंजीकरण की आवश्यकता</u> नहीं है। उप-धारा (2) के उप-खंड (vi) में, एक श्रेणी को उप-खंड (vi) से बाहर रखा गया है, अर्थात, एक डिक्री या आदेश जो एक समझौते पर किया गया है और जिसमें मुकदमे या कार्यवाही की विषय-वस्तु अचल संपत्ति के अलावा अन्य अचल संपत्ति शामिल है। इस प्रकार, धारा 17(1)(बी) और धारा 17(2)(vi) को संयुक्त रूप से पढ़ने से, यह स्पष्ट है कि एक समझौता डिक्री जिसमें अचल संपत्ति शामिल है, जो कि मुकदमे या कार्यवाही का विषय है, पंजीकरण की आवश्यकता है, हालांकि कोई भी न्यायालय की डिक्री या आदेश को धारा 17(2)(vi) के आधार पर पंजीकरण से छूट दी गई है। 1984 के सूट नंबर 250-ए में पारित डिक्री की एक प्रति को अनुबंध पी-2 के रूप में रिकॉर्ड पर लाया गया है, जो इंगित करता है कि दिनांक 04-10-1985 की डिक्री संपत्ति के लिए न्यायालय द्वारा पारित की गई थी, जो कि सुविधाजनक होने की विषय वस्तु थी। इस प्रकार, धारा 17(2)(vi) में बहिष्करणीय खंड लागू नहीं है और समझौता डिक्री दिनांक 04-10-1985 को धारा 17(2)(vi) के सादे पढ़ने पर पंजीकृत होने की आवश्यकता नहीं थी। उच्च न्यायालय ने भूप सिंह बनाम राम सिंह मेजर और अन्य, (1995) 5 एससीसी 709 में इस न्यायालय के फैसले का हवाला दिया, जिसमें पंजीकरण अधिनियम की धारा 17(2)(vi) का प्रावधान विचार के लिए आया था। उपरोक्त मामले में यह न्यायालय खंड (vi) पर विचार करते हुए पैराग्राफ 16,17 और 18 में निम्नलिखित निर्धारित करता है: -

"16. हमें उपरोक्त सभी बातों को ध्यान में रखते हुए खंड (vi) की पहुंच को देखना होगा, जो उपधारा (1) का अपवाद है। हमें लगता है कि दिए गए अपवाद का अर्थ अदालत के उस डिक्री या आदेश को कवर करना है, जिसमें एक समझौते पर किए गए डिक्री या आदेश भी शामिल हैं, जो पहले से मौजूद अधिकार की घोषणा करता है और 100 रुपये या उससे अधिक मूल्य की अचल संपत्ति में *स्वयं अपना* हित, नया अधिकार, शीर्षक या नहीं बनाता है। । किसी भी अन्य दृष्टिकोण से पंजीकरण से बचने की शरारत मिलेगी, जिसके लिए डिक्री या आदेश में स्टांप शुल्क का भुगतान करना आवश्यक है।

17. इसलिए, प्रत्येक मामले में यह जांच करना अदालत का कर्तव्य होगा कि क्या पार्टियों के पास अचल संपत्ति पर पहले से मौजूद अधिकार हैं, या क्या अदालत के आदेश या डिक्री के तहत एक पक्ष के पास अधिकार, शीर्षक या हित है। इसे समाप्त करने के लिए सहमत हुए या पीड़ित हुए और 100 रुपये या उससे अधिक मूल्य की अचल संपत्ति में किसी अन्य पक्ष के पक्ष में पहली बार समझौता या दिखावटी सहमति से अधिकार, शीर्षक या हित बनाया। यदि बाद की स्थिति हो, तो दस्तावेज़ अनिवार्य रूप से पंजीकरण योग्य है।

18. उपरोक्त चर्चा के आधार पर, खंड (vi) की कानूनी स्थिति को निम्नानुसार संक्षेपित किया जा सकता है:

(1) यदि समझौता डिक्री प्रामाणिक है, तो इस अर्थ में कि समझौता स्टांप शुल्क के भुगतान से बचने और पंजीकरण से संबंधित कानून को विफल करने का एक उपकरण नहीं है, पंजीकरण की आवश्यकता नहीं होगी। विपरीत स्थिति में, इसके लिए पंजीकरण की आवश्यकता होगी।

(2) यदि समझौता डिक्री पहली बार 100 रुपये या उससे अधिक मूल्य की अचल संपत्ति में मुकदमे के किसी भी पक्ष के पक्ष में अधिकार, शीर्षक या हित बनाने के लिए थी तो डिक्री या आदेश के लिए पंजीकरण की आवश्यकता होगी।

(3) यदि डिक्री धारा 17 की उप-धारा (1) के किसी भी खंड को आकर्षित नहीं करती, जैसा कि पूर्वोक्त प्रिवी काउंसिल और इस न्यायालय के मामलों में स्थिति थी, तो यह स्पष्ट है कि डिक्री को पंजीकरण की आवश्यकता नहीं होगी।

(4) यदि डिक्री में समझौते की शर्तों को शामिल नहीं किया गया था, जैसा कि *लाहौर मामले में* स्थिति थी, तो समझौते की शर्तों से लाभ प्राप्त नहीं किया जा सकता है, भले ही प्रश्न में समझौते के कारण एक मुकदमे का निपटारा किया जाना हो।

(5) यदि डिक्री द्वारा निपटाई गई संपत्ति "मुकदमे या कार्यवाही का विषय-वस्तु" नहीं है, तो उपधारा (2) का खंड (vi) लागू नहीं होगा, क्योंकि अधिनियम 21 द्वारा इस खंड में संशोधन किया गया है। 1929, जिसकी उत्पत्ति प्रिवी काउंसिल के पूर्वोक्त निर्णय में हुई है, जिसके अनुसार मूल खंड आकर्षित होता, भले ही इसमें मुकदमा न की गई संपत्ति शामिल हो।"

7. उस मामले के तथ्यों में, इस न्यायालय ने माना कि पहले मुकदमे को वास्तव में समझौते के आधार पर डिक्री नहीं किया जा सकता है, क्योंकि मुकदमे को "प्रतिवादी द्वारा दावे को स्वीकार करते हुए दायर किए गए लिखित बयान के मद्देनजर वादी सही है" डिक्री किया गया था। इसके अलावा, पहले के आदेश को मिलीभगत वाला माना गया। उपरोक्त मामले में पूर्व डिक्री को पंजीकरण की आवश्यकता मानने के दो कारणों का उल्लेख निर्णय के पैराग्राफ 19 में किया गया है, जो निम्नलिखित प्रभाव में है: -

"19. अब, आइए देखें कि क्या 1973 के सूट नंबर 215 में पारित डिक्री के बल पर, डिक्री पंजीकृत नहीं होने के बावजूद, याचिकाकर्ता वर्तमान मुकदमे में अपने लिखित बयान में अपना मामला बरकरार रख सकता है। हमारे अनुसार, यह दो कारणों से नहीं हो सकता:

(1) डिक्री में पहली बार वादी में अधिकार या शीर्षक बनाने का इरादा है जो पहले से मौजूद अधिकार की घोषणा नहीं है, पंजीकरण की आवश्यकता है। यह भी

बताया जा सकता है कि पहले मुकदमे को वास्तव में समझौते के आधार पर डिक्री नहीं किया जा सकता है, क्योंकि मुक़दमे का डिक्री "वादी के दावे को सही मानने वाले प्रतिवादी द्वारा दायर लिखित बयान के मद्देनजर" किया गया था। ऐसी स्थिति में मुकदमे का डिक्री आदेश 12 नियम 6 द्वारा कवर किया जाता है, न कि आदेश 23 नियम 3 द्वारा, जो मुकदमे के समझौते से संबंधित है, जबकि पूर्व प्रवेश पर निर्णय के विषय पर है।

(2) आक्षेपित निर्णय के अवलोकन से पता चलता है कि प्रथम अपीलीय अदालत ने विचाराधीन डिक्री को 'मिलीभगत' के रूप में माना क्योंकि यह उन अन्य लोगों के अधिकार को पराजित करने की दृष्टि से था, जिनका गणपत की संपत्ति पर वास्तविक दावा था। उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश ने भी यही विचार रखा।''

8. **भूप सिंह (सुप्रा)** के उपरोक्त फैसले के बाद, उच्च न्यायालय ने माना कि चूंकि समझौता डिक्री दिनांक 04-10-1985 ने वादी के किसी भी पूर्व-मौजूदा अधिकार की घोषणा नहीं की, इसलिए इसे पंजीकरण की आवश्यकता है। उच्च न्यायालय ने **गुरुद्वारा साहिब बनाम ग्राम पंचायत ग्राम सिरथला और अन्य (सुप्रा)** के फैसले पर भरोसा किया और पैराग्राफ 11, 12 और 13 में निम्नलिखित टिप्पणियां कीं: -

"11. वर्तमान मामले में, पहले के मुकदमे सीएस संख्या 250-ए/1984 में याचिकाकर्ता ने प्रतिकूल कब्जे की दलील पर स्वामित्व की घोषणा का दावा किया था और मुकदमे में समझौता डिक्री पारित की गई थी। तथ्य यह है कि मुकदमा प्रतिकूल कब्जे की दलील पर आधारित था, यह दर्शाता है कि याचिकाकर्ता के पास मुकदमे की संपत्ति पर पहले से कोई स्वामित्व नहीं था। जब तक मुक़दमे का फैसला नहीं सुनाया गया, याचिकाकर्ता केवल एक अतिक्रमणकर्ता था, अधिक से अधिक वैध स्वामी के शीर्षक से इनकार कर रहा था।

12. सुप्रीम कोर्ट ने **2014 (3) एमपीएलजे 36** में रिपोर्ट किए गए **गुरुद्वारा साहिब बनाम ग्राम पंचवट गांव सिरथला** के मामले में ने तय किया है कि प्रतिकूल कब्जे की दलील के आधार पर घोषणात्मक डिक्री का दावा नहीं किया जा सकता है और प्रतिकूल कब्जे को केवल बचाव में ढाल के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। प्रतिवादी। यह माना गया है कि:-

> "7. दूसरी अपील में, प्रतिकूल कब्जे द्वारा स्वामित्व की राहत को फिर से यह कहते हुए अस्वीकार कर दिया गया कि ऐसा मुकदमा चलने योग्य नहीं है। इस हद तक कोई झगड़ा नहीं हो सकता कि निचली अदालतों के फैसले सही और बिना किसी दोष के हैं। भले ही वादी प्रतिकूल कब्जे में पाया जाता है, वह इस आशय की घोषणा की मांग नहीं कर सकता है कि ऐसा प्रतिकूल कब्जा स्वामित्व में परिपक्व हो गया है। केवल अगर अपीलकर्ता के खिलाफ दायर कार्यवाही और अपीलकर्ता को प्रतिवादी के रूप में पेश किया जाता है तो वह इस प्रतिकूल कब्जे को ढाल/बचाव के रूप में उपयोग कर सकता है।
>
> 13. लिमिटेशन एक्ट की धारा 27 के आधार पर याचिकाकर्ता की याचिका किसी भी योग्यता से रहित पाई गई है क्योंकि यह लिमिटेशन एक्ट की समाप्ति के बाद वैध मालिक के अधिकार के विलुप्त होने से संबंधित है, लेकिन फैसले के मद्देनजर **गुरुद्वारा साहिब (सुप्रा)** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय में, याचिकाकर्ता उक्त सीमा की समाप्ति के बाद खुद को स्वचालित रूप से मालिक होने का दावा नहीं कर सकता है।

9. **गुरुद्वारा साहिब बनाम ग्राम पंचायत ग्राम सिरथला और अन्य (सुप्रा)** के फैसले को अब **रविंदर कौर ग्रेवाल और अन्य बनाम मंजीत कौर और अन्य**, (2019) 8 एससीसी 729 में तीन जजों की बेंच के फैसले ने स्पष्ट रूप से खारिज कर दिया है। उपरोक्त मामले में पैराग्राफ 62 में कहा गया है कि एक बार जब प्रतिकूल कब्जे की 12 साल की अवधि समाप्त हो जाती है,

तो मालिक का उसे बेदखल करने का अधिकार भी खो जाता है और मालिकाना हक वाले मालिक को बाहर जाने वाले व्यक्ति/मालिक के अधिकार, शीर्षक और ब्याज प्राप्त हो जाते हैं। अनुच्छेद 62 में, निम्नलिखित निर्धारित किया गया है:

> "62. हमारा मानना है कि किसी कब्जे वाले व्यक्ति को कानून की उचित प्रक्रिया के अलावा किसी अन्य व्यक्ति द्वारा बेदखल नहीं किया जा सकता है और एक बार प्रतिकूल कब्जे की 12 साल की अवधि समाप्त हो जाने पर, मालिक का उसे बेदखल करने का अधिकार भी खो जाता है और कब्जे वाले मालिक को अधिकार, स्वामित्व और हित प्राप्त हो जाता है। निवर्तमान व्यक्ति/मालिक द्वारा, जैसा भी मामला हो, जिसके विरुद्ध उसने निर्धारित किया है। हमारी राय में, परिणाम यह है कि एक बार अधिकार, शीर्षक या हित प्राप्त हो जाने के बाद इसे वादी द्वारा तलवार के रूप में और साथ ही अधिनियम के अनुच्छेद 65 के तहत प्रतिवादी द्वारा ढाल के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है और कोई भी व्यक्ति जिसने अधिकार प्राप्त कर लिया है। प्रतिकूल कब्जे का रास्ता, बेदखली की स्थिति में कब्जे की बहाली के लिए मुकदमा दायर कर सकता है। किसी अन्य व्यक्ति द्वारा कानून अपने हाथ में लेकर बेदखल करने की स्थिति में, प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से स्वामित्व के परिपक्व होने से पहले भी, अनुच्छेद 64 के तहत स्वामित्व का मुकदमा कायम किया जा सकता है। मालिक के स्वामित्व के समाप्त होने पर स्वामित्व की पूर्णता से, कोई व्यक्ति उपचारहीन नहीं हो सकता। यदि उसे प्रतिकूल कब्जे के कारण अधिकार खोने के बाद मालिक द्वारा बेदखल कर दिया गया है, तो वादी द्वारा उसे प्रतिकूल कब्जे की दलील देकर बेदखल किया जा सकता है। इसी प्रकार, कोई अन्य व्यक्ति जिसने वादी को प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से पूर्ण स्वामित्व से बेदखल कर दिया हो, उसे भी तब तक बेदखल किया जा सकता है जब तक कि ऐसे अन्य व्यक्ति ने प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से ऐसे वादी के खिलाफ अधिकार को पूरा नहीं कर लिया हो। इसी प्रकार, अन्य अनुच्छेदों के तहत भी अपने किसी भी अधिकार

के उल्लंघन के मामले में, एक वादी जिसने प्रतिकूल कब्जे से शीर्षक को पूरा कर लिया है, वह मुकदमा कर सकता है और मुकदमा चला सकता है।

10. पैराग्राफ 61 में, इस न्यायालय ने **गुरुद्वारा साहिब बनाम ग्राम पंचायत ग्राम सिरथला और अन्य (सुप्रा)** को स्पष्ट रूप से खारिज कर दिया है।

11. **रविंदर कौर ग्रेवाल और अन्य बनाम मंजीत कौर और अन्य (सुप्रा)** में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की खंडपीठ द्वारा सुनाए गए फैसले के मद्देनजर, 04-10-1985 के उस समझौता विलेख को रखने के लिए उच्च न्यायालय के मूल आधार पर पंजीकरण की आवश्यकता है बाहर कर दिया गया है. वर्तमान में ऐसा कोई मामला नहीं है जहां कोई आरोप हो कि दिनांक 04-10-1985 का डिक्री एक मिलीभगतपूर्ण डिक्री है। डिक्री दिनांक 04-10-1985, सर्वे नंबर 203 की 7 बिस्वा भूमि वादी के पक्ष में थी और सर्वे नंबर 203 की शेष भूमि के लिए यह माना गया कि यह प्रतिवादियों की थी।

12. **भूप सिंह (सुप्रा)** मामले में, इस न्यायालय ने माना कि पहले के डिक्री को पैराग्राफ 19 में उल्लिखित कारणों के लिए पंजीकरण की आवश्यकता है। उपरोक्त मामले के पैराग्राफ 19 में दिए गए कारणों का वर्तमान मामले के तथ्यों में कोई अनुप्रयोग नहीं है।

13. इस न्यायालय ने **सोम देव और अन्य बनाम रति राम और अन्य, (2006) 10 एससीसी 788** में धारा 17(2)(vi) और धारा 17(1)(बी) और (सी) की व्याख्या करते हुए माना कि सभी डिक्री और आदेश समझौता डिक्री सहित न्यायालय के अपवाद के अधीन, जैसा कि संदर्भित है कि जो संपत्तियां मुकदमे की विषय वस्तु से बाहर हैं, उन्हें पंजीकरण की आवश्यकता नहीं है। पैराग्राफ 18 में, इस न्यायालय ने निम्नलिखित निर्धारित किया: -

> "18. ..... लेकिन सम्मान के साथ, यह बताया जाना चाहिए कि किसी अदालत की डिक्री या आदेश को पंजीकरण की आवश्यकता नहीं है यदि यह इस आधार पर समझौते पर आधारित नहीं है कि खंड (पंजीकरण अधिनियम की बी धारा 17 के बी) और (सी) आकर्षित होते हैं। यहां तक कि किसी समझौते की डिक्री को भी पंजीकरण की

आवश्यकता नहीं होती है यदि वह ऐसी संपत्ति नहीं लेती है जो मुकदमे की विषय-वस्तु नहीं है..."

14. वर्तमान मामले के तथ्यों में, दिनांक 04-10-1985 का डिक्री संपत्ति के संबंध में था, जो मुकदमे का विषय था, इसलिए धारा 17(2)(vi) के बहिष्करण खंड द्वारा कवर नहीं किया गया था और वर्तमान मामला है धारा 17(2)(vi) में तैयार किए गए मुख्य अपवाद द्वारा कवर किया गया है, यानी, "न्यायालय का कोई डिक्री या आदेश"। जब धारा 17(1)(बी) द्वारा अपेक्षित किसी उपकरण के पंजीकरण को विशेष रूप से धारा 17(2)(vi) द्वारा बाहर रखा जाता है, यह प्रदान करते हुए कि उप-धारा (1) के खंड (बी) और (सी) में कुछ भी लागू नहीं होता है न्यायालय की किसी भी डिक्री या आदेश के मामले में, हमारा मानना है कि समझौता डिक्री दिनांक 04-10-1985 को पंजीकरण की आवश्यकता नहीं थी और विद्वान सिविल न्यायाधीश के साथ-साथ उच्च न्यायालय ने भी अन्यथा निर्णय लेने में गलती की। इस प्रकार, हमने सिविल जज के दिनांक 07-01-2015 के आदेश के साथ-साथ उच्च न्यायालय के दिनांक 13-02-2017 के फैसले को रद्द कर दिया। समझौता डिक्री दिनांक 04-10-1985 को ट्रायल कोर्ट द्वारा प्रदर्शित करने का निर्देश दिया गया है। तदनुसार अपील स्वीकार की जाती है।

दिव्या पांडे

अपील स्वीकार की गई।

आशीष तिवारी द्वारा अनुवादित।